Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
April 2024 5(4), 2288 –2292

BIHAR SCIENTIFIC SOCIETY AND DEVELOPMENT OF NATIONAL SCIENCE IN COLONIAL MUZAFFARPUR, 1868-1899

बिहार साइंटिफिक सोसाईटी और औपनिवेशिक मुजफ्फरपुर में राष्ट्रीय विज्ञान का विकास, 1868-1899

Maniranjan Kumar [1], Gautam Chandra [2]

[1] Research Scholar, Department of History, B.R. Ambedkar Bihar University, Muzaffarpur, India
[2] Assistant Professor, Department of History, B.R.A. Bihar University, Muzaffarpur, India

ABSTRACT

English: The science used during British rule in India was colonial in nature. Its character was to promote colonial exploitation rather fundamental research. This exploitative character of science came to be known as 'colonial science'. The kind of relationship that developed between India and Britain due to 'colonial science' inspired Indians to learn 'national science', which could lead to the development of Indians. As a result, the Bihar Scientific Society was established in colonial Muzaffarpur by Imdad Ali on 24 May 1868. Initially, it was named as British Indian Association. The society also ran translation departments and schools. Along with this, a magazine 'Akhbar-ul-Akhyair' was published from the society's own printing press. Its purpose was to criticize the actions of the government and to save people from oppression by conveying their complaints to the government. In 1872, its name was changed to Bihar Scientific Society. Its objective was to do intellectual, social and moral welfare of the people as well as to translate European scientific works in regional language and make them available to common people. French orientalist Garcin-de-Tassy has mentioned the work of society in his article. Apart from this, Bihar Scientific Society has been mentioned in Deepak Kumar's book "Science and British Raj in India, 1857-1905", David Arnold's book "Science, Technology and Medicine in Colonial India" and others, but there is a lack of detailed study of the Bihar Scientific Society. How the Bihar Scientific Society and its translation department, schools and magazine 'Akhbar-ul-Akhyair' developed 'National Science' in colonial Muzaffarpur has not been highlighted. Hence, this article examines the role of Bihar Scientific Society, its translation department, schools, and magazine 'Akhbar-ul-Akhyair' in developing national science

Hindi: ब्रिटिश शासन के दौरान भारत में उपयोग किये गए विज्ञान का स्वरूप औपनिवेशिक था। जिसका चरित्र मौलिक शोध की जगह औपनिवेशिक शोषण को बढ़ावा देना था। विज्ञान के इस शोषणकारी चरित्र को 'औपनिवेशिक विज्ञान' के रूप में जाना गया। 'औपनिवेशिक विज्ञान' के कारण भारत और ब्रिटेन के बीच जिस प्रकार का सम्बन्ध विकसित हुआ, उससे प्रेरित हो भारतीयों को भी एक ऐसे 'राष्ट्रीय विज्ञान' को सीखने की चेतना प्रकट हुई, जिससे कि भारतीयों का विकास हो सके जिसके परिणामस्वरूप औपनिवेशिक मुजफ्फरपुर में बिहार साइंटिफिक सोसाईटी की स्थापना इमदाद अली द्वारा 24 मई 1868ई. में की गयी। शुरूआत में इसका नाम ब्रिटिश इण्डियन एसोसिएशन था। सोसाईटी द्वारा अनुवाद विभाग और विद्यालयों का भी संचालन किया जाता था। साथ ही एक पत्रिका अखबार-उल-आखिर का प्रकाशन सोसाईटी की अपनी मुद्राणालय से प्रकाशित की जाती थी। इसका उद्देश्य सरकार की कार्यवाहियों की आलोचना करना एवं लोगों की शिकायतो को सरकार तक पहुँचाकर उन्हें उत्पीड़न से बचाना था। 1872 में इसका नाम बदलकर बिहार साइंटिफिक सोसाईटी कर दिया गया। इसका उद्देश्य लोगो की बौद्धिक सामाजिक और नैतिक भलाई करना साथ ही यूरोपीय वैज्ञानिक कार्यो का अनुवाद क्षेत्रिय भाषा में करना और आम लोगों तक पहुँचाना। सोसाइटी के कार्यों का जिक्र फ्रांसीसी प्राच्यवादी गार्सियन-डी-टैसी ने अपने आलेख में किया है। इसके आलावा दीपक कुमार की पुस्तक ''विज्ञान और भारत में अंग्रेजी राज'' 1857-1905, डेविड अर्नोल्ड की पुस्तक ''औपनिवेशिक भारत में विज्ञान, प्रोधोगिकी और आयुर्विज्ञान '' आदि पुस्तकों में बिहार साइंटिफिक सोसाईटी का तथ्यात्मक रूप में वर्णन किया गया है, इनमें विस्तृत अध्ययन का अभाव है। इस प्रकार बिहार साइंटिफिक सोसाईटी पर हुए अध्ययनों में इनके द्वारा संचालित अनुवाद विभाग, विद्यालयों, प्रकाशित पत्रिका अखबार-उल- आखिर का संचालन किस प्रकार किया गया एवं औपनिवेशिक मुजफ्फरपुर के क्षेत्रों में 'राष्ट्रीय विज्ञान' का विकास किस प्रकार हुआ । इन मुख्य बिंदुओं पर प्रकाश नहीं डाला गया है। अतः यह लेख राष्ट्रीय विज्ञान के विकास में बिहार साइंटिफिक सोसाईटी और इनके द्वारा संचालित अनुवाद विभाग, विद्यालयों और प्रकाशित पत्रिका 'अखबार-उल- आखिर' की भूमिका का परीक्षण करता है।

Corresponding Author
Maniranjan Kumar,
maniranjanpratapsingh@gmail.com

DOI
10.29121/shodhkosh.v5.i4.2024.6314

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2024 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

Keywords: Scientific, Society, Colonial साइंटिफिक, सोसाईटी, औपनिवेशिक

1. प्रस्तावना

ब्रिटिश शासन के दौरान भारत में उपयोग किये गए विज्ञान का स्वरूप औपनिवेशिक था। जिसका चरित्र मौलिक शोध की जगह औपनिवेशिक शोषण को बढ़ावा देना था। विज्ञान के इस शोषणकारी चरित्र को 'औपनिवेशिक विज्ञान' के रूप में जाना गया। 'औपनिवेशिक विज्ञान' के कारण भारत और ब्रिटेन के बीच जिस प्रकार का सम्बन्ध विकसित हुआ, उससे प्रेरित हो भारतीयों को भी एक ऐसे 'राष्ट्रीय विज्ञान' को सीखने की चेतना प्रकट हुई, जिससे कि भारतीयों का विकास हो सके जिसके परिणामस्वरूप औपनिवेशिक मुजफ्फरपुर में बिहार साइंटिफिक सोसाईटी की स्थापना इमदाद अली द्वारा 24 मई 1868ई. में की गयी। शुरूआत में इसका नाम ब्रिटिश इण्डियन एसोसिएशन था।[1] सोसाईटी द्वारा अनुवाद विभाग और विद्यालयों का भी संचालन किया जाता था। साथ ही एक पत्रिका अखबार-उल-आखिर का प्रकाशन सोसाईटी की अपनी मुद्राणालय से प्रकाशित की जाती थी। इसका उद्देश्य सरकार की कार्यवाहियों की आलोचना करना एवं लोगों की शिकायतो को सरकार तक पहुँचाकर उन्हें उत्पीड़न से बचाना था। 1872 में इसका नाम बदलकर बिहार साइंटिफिक सोसाईटी कर दिया गया। इसका उद्देश्य लोगो की बौद्धिक सामाजिक और नैतिक भलाई करना साथ ही यूरोपीय वैज्ञानिक कार्यो का अनुवाद क्षेत्रिय भाषा में करना और आम लोगों तक पहुँचाना।[2] सोसाइटी के कार्यों का जिक्र फ्रांसीसी प्राच्यवादी गार्सियन-डी-टैसी ने अपने आलेख में किया है। इसके आलावा दीपक कुमार की पुस्तक ''विज्ञान और भारत में अंग्रेजी राज'' 1857-1905, डेविड अर्नोल्ड की पुस्तक ''औपनिवेशिक भारत में विज्ञान, प्रोधोगिकी और आयुर्विज्ञान '' आदि पुस्तकों में बिहार साइंटिफिक सोसाईटी का तथ्यात्मक रूप में वर्णन किया गया है, इनमें विस्तृत अध्ययन का अभाव है। इस प्रकार बिहार साइंटिफिक सोसाईटी पर हुए अध्ययनों में इनके द्वारा संचालित अनुवाद विभाग, विद्यालयों, प्रकाशित पत्रिका अखबार-उल- आखिर का संचालन किस प्रकार किया गया एवं औपनिवेशिक मुजफ्फरपुर के क्षेत्रों में 'राष्ट्रीय विज्ञान' का विकास किस प्रकार हुआ । इन मुख्य बिंदुओं पर प्रकाश नहीं डाला गया है। अतः यह लेख राष्ट्रीय विज्ञान के विकास में बिहार साइंटिफिक सोसाईटी और इनके द्वारा संचालित अनुवाद विभाग, विद्यालयों और प्रकाशित पत्रिका 'अखबार-उल- आखिर' की भूमिका का परीक्षण करता है।

2. औपनिवेशिक विज्ञान से राष्ट्रीय विज्ञान की ओर

भारत में दीर्घकालीन औपनिवेशिक शासन की स्थापना के पूर्व से ही एक सुव्यवस्थित वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक परंपरा रही है। सत्रहवीं-अठारहवीं शताब्दियों के दौरान युरोप मे पुनर्जागरण के बाद वैज्ञानिक और भौतिक प्रगति का एक नया दौर आंरभ हुआ, जिसकी परिणति ब्रिटेन में औद्योगिक क्रांति के रूप में हुई। परंतु यूरोप की तुलना में भारत में विज्ञान एवं प्र्रौद्योगिकी के आधुनिक संस्थाओं के निर्माण के अभाव मे विज्ञान का ह्यस हो रहा था। जिसकी पुष्टि अबुल फजल के इस 'मर्सिया' से होती है।

''तकलिद (परंपरा) की भारी बयार बह रही है,
बुद्धि का दीपक मंद पड़ रहा है.... 'कैसे' और 'क्यों'
का द्वार बंद हो चुका है और प्रश्न और जिज्ञासा
व्यर्थ और विधर्मी जैसी चीजें मान लिए गए है।''[3]

उपनिवेशीकरण एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया एवं परिघटना थी। जिसका प्रभाव राजनितिक, समाज एवं अर्थव्यवस्था पर पड़ा, लेकिन इसी रूपों में इसका विस्तार विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्रो में भी देखा जा सकता है। विज्ञान ने साम्राज्य कि सुरक्षा एवं प्राकृतिक संसाधनों के दोहन में एक भूमिका अदा की जिसे हम 'औपनिवेशिक विज्ञान' के रूप में जानते है। औपनिवेशिक विज्ञान की संकल्पना को एक ऐसे पर निर्भर विज्ञान के बतौर परिभाषित किया गया है, जहाँ शुद्ध विज्ञान की जिज्ञासोंन्मुख खोजो की अपेक्षा कहीं ज्यादा जोर व्यवहारिक विज्ञान की परिणामन्मुख खोजो पर हुआ करता था। पर-निर्भरता के इस परिपेक्ष्यों को जॉर्ज बासाल विसरणवादी मॉडल में तब्दील कर दिया। उन्होंने पश्चिमी विज्ञान के गैर यूरोपीय क्षेत्रो में 'विस्तार' की व्यवस्था के लिए तीन चरणों का एक उद्विकासवादी खाका प्रस्तुत किया।

''पहले चरण को अवैज्ञानिक समाज यूरोपीय समाज के लिए सूचना स्त्रोत उपलब्ध करवाता है, दूसरे चरण को औपनिवेशिक विज्ञान का नाम दिया गया है, तीसरे चरण में आरोपण की प्रक्रिया पूरी हो जाती है और इसमें स्वतंत्र वैज्ञानिक परम्परा या संस्कृति हासिल करने का संघर्ष भी शामिल है।''[4]

उपनिवेश के दौर में विज्ञान पर अपना सैद्धांतिक परिपेक्ष्य प्रस्तुत करते हुए वी वी कृष्णा ने तीन श्रेणियों की चर्चा की है।

(क) 'द्वारपाल', जिन्होंने ने विज्ञान को परनिर्भर बनानें में अपना योगदान किया।

(ख) 'विज्ञान के सिपाही', जिन्होने सिर्फ अपनी पेशागत भुमिका निभाई।

(ग) 'राष्ट्रीय वैज्ञानिक', जिन्होंने राष्ट्रवाद के ढांचे मं आधुनिक विज्ञान की जड़ रोपनें के लिए संधर्ष किया।[5]

---

1 डब्लू डब्लू हंटर, ए स्टेटिकल अकाउंट ऑफ बंगाल, खंड-13 लंदनः 1877 पृ.सं.,164।

2 मोहम्मद सज्जाद, कंटेस्टींग कोलोनियलिज्म एंड सेप्रेटिज्मः मुस्लिम ऑफ मुजफ्फरपुर सिंस 1857, दिल्लीः प्राइमस, 2014 पृ.सं., 50।

3 दीपक कुमार, विज्ञान और भारत में अंग्रेजी राज 1857-1905, दिल्लीः ग्रंथशिल्पी, 2014, पृ.सं., 39।

4 जार्ज बसाल, 'द स्प्रेड ऑफ वेस्टर्न सांइस' सांइस. खण्ड 156 (3775), 1967, पृ.सं., 611-622।

5 दीपक कुमार, विज्ञान और भारत में अंग्रेजी राज 1857 से 1905, दिल्लीः ग्रंथ शिल्पी, 2014, पृ.सं., 21।

औपनिवेशिक विज्ञान के अलोक में भारत और ब्रिटेन के बीच जिस प्रकार का सम्बन्ध विकसित हुआ, उससे प्रेरित हो भारतीयों को भी एक ऐसे ‘राष्टीय विज्ञान‘ को सीखने की चेतना प्रकट हुई, जिससे कि भारतीयों का विकास हो सके। जिसके परिणामस्वरूप 1868 ई.मे मुजफ्फरपुर मे इमदाद अली द्वारा बिहार साइंटिफिक सोर्साइंटी की स्थापना की ताकि स्थानीय एवं क्षेत्रीय स्तर पर विज्ञान, तार्किकता का प्रसार किया जा सके एवं ‘राष्टीय विज्ञान‘ को मजबूती प्रदान हो सके।

3. बिहार साइंटिफिक सोसाईटी और विद्यालय

सोसाईटी के द्वारा विद्यालय, मुद्राणालय और मुजफ्फरपुर में एक मदरसा का स्थापना किया गया। साथ ही सोसाईटी द्वारा सितम्बर 1868ई. में एक पाक्षिक उर्दू पत्रिका अखबार-उल-आखिर प्रारंभ किया गया जो की सोसाईटी की अपनी मुद्राणालय से प्रकाशित की जाती थी। जिसका नाम चश्म-ए-नूर या लामा-ए-नूर था। सोसाईटी की शाखा भागलपुर तथा लखनऊ में भी स्थापित की गई। सोसाईटी का मुख्यालय मुजफ्फरपुर था। इसके स्थापना के समय 318 लोग इसके सदस्य थे। जिनमें 128 मुस्लिम, 162 हिन्दू और 20 यूरोपियन थे। लेकिन सोसाईटी के द्वारा 1871 ई. तक 511 सदस्य बनाया गया जिनमें 8 महिला थी जो कि मासिक रूप से 39.2 पोंड का योगदान करती थी। जिसकी पुष्टी मोहम्मद सज्जाद की पुस्तक ‘कंटेस्टींग कोलोनियलिज्म एंड सेप्रेटिज्म: मुस्लिम आॅफ मुजफ्फरपुर सीन्स 1857’ से होती है। सोसाईटी के कुछ प्रमुख सदस्य थे जिनमें महाराज जय मंगल सिंह बहादुर, मुंगेर के जमींदार, जय प्रसाद सिंह बहादुर गाया के जमींदार, राजा लीला नंद सिंह बहादुर, पूर्णिया के जमींदार और राजा हरबल्लभ नारायण सिंह, मुंगेर के जमींदार। बंगाल के लेफ्टिनेंट गवर्नर बेली सोसाईटी के संरक्षक बने। सोसाइटी के नियमों एवं कार्यवाहियों की जांच करने के बाद वायसराय लार्ड मेयो भी इसके संरक्षक बने।[6] जिसके लिए सोसाईटी की ओर से वायसराय को धन्यवाद पत्र भेजा गया। इमदाद अली 1829 में सरकारी सेवा में शामिल हुए और कई वर्षो तक राजस्व विभाग के विभिन्न पदो पर काम करने के बाद डिप्टी मजिस्ट्रेट के पद पर आसीन हुए। इसके बाद उन्होने न्यायिक क्षेत्र को चुना और 1848 ई. में मुंसिफ नियुक्त किए गये और बाद में उन्हें सबजजशिप में पदोन्नत कर दिया गया। जिस पद को उन्होने 1875 ई. तक अपनी सेवानिवृत्ति तक धारण किया। 1875 ई. तक इमदाद अली के सेवानिवृति के बाद सोसाइटी धीरे-धीरे निष्क्रिय हो रही थी। इसका अंतिम व्याख्यान 1877 में दिया गया था। 1878 ई. के दिल्ली दरबार में भारत सरकार ने इमदाद अली को अतिथि के रूप में आमंत्रित किया और उन्हे खान बहादुर की उपाधि से सम्मानित किया। दिल्ली से लौटने पर वे लकवा ग्रस्त हो गये और अगस्त 1886 ई. में उनका देहांत हो गया। इनके जाने के बाद सैयद मोहम्मद ताकी ने इस आंदोलन को आगे बढ़ाया । सोसाईटी की उपलब्धियों पर टिप्पणी करते हुए इमदाद अली ने कहा था: ‘‘इस सोसाईटी के माध्यम से बिहार के लोगों को जो लाभ हुआ वह दोपहर के सूरज की तरह स्पष्ट है‘‘।

बिहार साइंटिफिक सोसाईटी द्वारा मुजफ्फरपुर में एक विद्यालय की स्थापना की गयी साथ ही पारू में भी एक निम्नस्तरीय विद्यालय का स्थापना किया गया।[7] मुजफ्फरपुर के विद्यालय में 119 विद्यार्थी मार्च 1877 तक अध्ययनरत थे जिसमें 99 मुस्लिम, 20 हिन्दू थे जिसमें सबसे ज्यादा कायस्थ थे। इस विद्यालय में पर्शियन, संस्कृत और हिन्दी सिखाया जाता था। मुजफ्फरपुर में स्थापित विद्यालय की प्रशंसा तत्कालीन कार्यवाहक संयुक्त मजिस्ट्रेट जे0 डी वोड्किसन द्वारा किया गया जो की स्वयं स्कूल पहुँचकर बच्चों से मुलाकात भी की। मुजफ्फरपुर में स्थापित विद्यालय सोसाईटी विद्यालय के नाम से जाना जाता था। जिसे 1917-22 ई. के दौरान नाम बदलकर चैपमैन कर दिया गया। जो कि अप्रैल 1855 ई. में बिहार में पदस्थापित विद्यालय निरीक्षक आर0 बी0 चैपमैन के नाम पर था। मुजफ्फरपुर के आस पास के क्षेत्रो में यूरोपियन विज्ञान सीखाने के लिए इमदाद अली की प्रेरणा से सारण (छपड़ा) नरहन, जैतपुर, हरदी, पारू, सीतामढ़ी तथा भागलपुर, गया आदि में विद्यालय का स्थापना किया गया। छपड़ा में स्थापित विद्यालय अच्छे प्रदर्शन के कारण 16 मई 1871 ई. को पटना के तत्कालीन आयुक्त एस0 सी0 बेली ने इस विद्यालय का भ्रमण किया तो उन्होने कहा कि यह सबसे अच्छी स्थानीय स्कूलों में से एक है, सरकार को चाहिए की इस प्रकार के स्कूल को और अधिक सहायता दे। सोसाईटी द्वारा मुजफ्फरपुर में मदरसा का भी स्थापना की गयी। जिसमें साहित्य, अरबी, फारसी, संस्कृत आदि विषयों की क्षेत्रिय भाषा में पढ़ाया जाता था और लगभग कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रवेश परीक्षा स्तर तक के यूरोपिय विज्ञान स्थानीय भाषा में पढ़ाया जाता था। इसके अलावा अंग्रेजी भी पढ़ाई जाती थी ताकि विद्यार्थियों को भाषा पर पकड़ बनाने में सक्षम किया जा सके। इमदाद अली ने कई प्रभावशाली व्यक्तियों को स्कूल खोलने के लिए धन और दान इकट्ठा करने के लिए प्रेरित किया। जिनमें जैतपुर के जमींदार महंथ राजाराम दास अपने गांव में विद्यालय स्थापित करने के लिए 2000 रू0 की राशि का योगदान दिया। साथ ही नरहन के जमींदार परमेश्वरी प्रसाद नारायण सिंह ने 5000 रू0 की राशि विद्यालय भवन के लिए दिए एवं विद्यालय के रख रखाव के लिए हर महीने 150 रू0 निर्धारित किया। इसी तरह से काजी सैयद अब्दुर रहमान ने बाबू रघुनंदन प्रसाद की मदद से पारू में एक विद्यालय प्रारंभ किया। हरदी के जमींदार शिव प्रसन्न सिंह सोसाईटी के तीन उपाध्यक्षों में से एक थे। इन्हें आधुनिक शिक्षा में योगदान के लिए मानद मजिस्ट्रेट भी बनाया गया था। सोसाईटी के एक अन्य उपाध्यक्ष भूपतिराय, तिरहुत के सदर अमीन थे। सोसाईटी द्वारा 7 नवम्बर 1871 ई. को एक महाविद्यालय का स्थापना किया गया जिसे गार्सियन-डी-टैसी द्वारा सेन्ट्रल कॉलेज मुजफ्फरपुर बताया गया। गार्सियन-डी-टैसी फ्रांस के निवासी थे। साथ ही सोसाईटी द्वारा प्रकाशित पत्रिका अखबार-उल-आखिर के अभिदात भी थे। बाद में यह महाविद्यालय भूमिहार ब्राह्मण काॅलेजिएट के रूप में अपनी प्रसिद्धि प्राप्त की। बाद के दिनों में सोसाईटी द्वारा भूमिहार ब्राह्मण सभा के सहयोग से 1899 ई. में एक और महाविद्यालय की स्थापना की, जो 1950 ई. के दशक तक लंगट सिंह

[6] वी.ए. नारायण, द रोल ऑफ बिहार साइंटिफिक एसोसिएशन इन द स्प्रेड वेस्टर्न एजुकेशन इन बिहार, आई.एच.सी. खंड 31(1969) पृ.सं. 421-24।

[7] अशोक अंशुमान, विजय शंकर चैधरी, संपा. सलेक्ट डॉक्युमेंट लंगट सिंह काॅलेज, इनसेप्शन, कंसोलिडेशन एक्सपेंशन 1899-1959, पटनाः जानकी, 2016, पृ. सं., 3।

महाविद्यालय के रूप में प्रसिद्ध हुआ।[8] गार्सिन-डी-टैसी ने अपने वार्षिक व्याख्यान 1870 ई. में यह बताया कि सोसाईटी एक बड़ा महाविद्यालय स्थापित करने और गरीब छात्रों को कृषि और तकनीकि शिक्षा का प्रशिक्षण प्रदान करने का इरादा रखती है। वर्तमान में सोसाईटी द्वारा लगभग पाँच विद्यालय का संचालन किए जाते हैं। जिनमें बिना धार्मिक भेदभाव के हिन्दू और मुस्लिम अध्ययन करते है। टैसी को इस बात पर आश्चर्य हुआ क ऐसा प्रतीत होता है कि भारतीयों को अपने बच्चों को किसी दूसरे धर्म के बच्चों के साथ शिक्षा प्राप्त करने में कोई आपत्ति नहीं है। यह फ्रांस और आयरलैण्ड के लोगों के मानसिकता के विपरीत है।[9] जहाँ लोग अपने बच्चों को विभिन्न धर्मो के बच्चों के साथ शिक्षा प्राप्त करने की अनुमति प्रदान करने से बचते है। वह बताते है कि पाँच विद्यालय में से एक ने विशेष रूप से अधिक प्रगति की है। जहां छात्रों को उर्दू माध्यम से न केवल यूरोपियन विज्ञान बल्कि धार्मिक विषय की भी शिक्षा प्रदान की जाती थी। संस्कृत पढ़ाने के लिए एक पंडित तथा अरबी पढ़ाने के लिए एक मौलवी नियुक्त किया गया। यही विवरण अन्यत दर्ज है कि सोसाईटी ने तिरहुत के कई जिलो में विद्यालय स्थापित किए। अगर सरकार सोसाईटी को अपना सहयोग देती तो जल्द ही ऐसा कुछ और विद्यालय स्थापित किए जाते। सोसाईटी की कुल संपत्ति दान से आती थी। जो कि जमींदारों और सम्पन्न लोगो द्वारा दी जाती थी। जिसका विवरण उपरोक्त दिया जा चुका है।

4. अनुवाद विभाग और पुस्तकालय

तत्कालीन समय के विद्यालयों के निरीक्षक डॉ. फालन ने सोसाईटी के कार्यो में बहुत रूचि ली और इसका भरपूर सहयोग किया उनका मानना था की भारतीयों को यूरोपिय विज्ञान पढ़ाने के लिए स्थानीय भाषा ही सबसे अच्छा माध्यम है। लेकिन यह बहुत ही कठिन कार्य था। जिसको बिना सरकार के सहयोग प्राप्त किए प्रारंभ नहीं किया जा सकता था। 1868 ई. में आयोजित सोसाईटी की एक बैठक में गवर्नर-जनरल-इन-काउंसिल को एक अभ्यावेदन प्रस्तुत किया गया जिसमें स्थानीय भाषाओं के माध्यम से यूरोपिय विज्ञान के प्रसार में सहायता का अनुरोध किया गया। इसी वर्ष जुलाई में सरकार को एक और अभ्यावेदन भेजा गया। सोसाईटी के दबाव के कारण वायसराय ने इस विषय पर भारत के राज्य सचिव के साथ वार्तालाप की। जिसके परिणामस्वरूप 31 मार्च 1870 ई. को भारत सरकार का एक प्रस्ताव पारित हुआ जिसका उद्देश्य स्थानिय भाषा में शिक्षा का प्रसार करना था। सोसाईटी केवल सरकारी सहायता की याचना से ही संतुष्ट नहीं हुआ बल्कि अपने सदस्यों से प्राप्त उदार अनुदान से यूरोपिय वैज्ञानिक कार्यों का अनुवाद का काम प्रारंभ किया। सोसाईटी द्वारा 200/- रूपया प्रति माह पर एक अनुवादक नियुक्त किया गया जिसके कारण मई 1869 ई. के अंत तक सोसाईटी द्वारा स्थानीय भाषाओं में कुछ विषयों की पुस्तकों का अनुवाद किया गया जिनमें ट्रिगोनमेट्री, मैटेरिया मेडिका, ऑप्टिक्स, एनिमल फिजियोलॉजी, केमेस्ट्री, डेयिंग, जियोग्राफी, बॉटनी, हिस्ट्री, मैकेनिक्स, एल्जेब्रा, हिस्ट्री ऑफ फिलोसॉफी, एग्रीकल्चर, जूलॉजी, अर्थमेटिक, लॉ ऑफ हॉस्पिटल, मिनरलॉजी एंड मासोंरी (सिविल इंजीनियरिंग) पर प्रतिष्ठित लेखकों के कुछ कार्यो का अनुवाद उर्दू में किया गया।[10] हालाकि सैयद इमदाद अली ने शिक्षा के स्थानीय और अंग्रेजी माध्यम के बीच संतुलन बनाए रखा। 1 फरवरी 1872 ई. को सोसाईटी की एक आम बैठक मुजफ्फरपुर में हुई, बैठक में लगभग एक हजार लोग शामिल हुए। साथ ही इस बैठक में विद्यालयों के उत्तीर्ण छात्रों के बीच पुरस्कार भी वितरण किया गया जिसका प्रबंधन सोसाईटी द्वारा ही की गयी। इसके बाद इमदाद अली द्वारा एक संक्षिप्त लेकिन स्पष्ट भाषण दिया गया। जिसमें सोसाईटी के उपलिब्धयों का वर्णन विस्तार से किया गया और उनके उद्देश्यों पर फिर से जोर दिया गया। संबोधन में खास तौर पर उन्होने कहा की लोगों को यह आशंका नहीं रखना चाहिए की वैज्ञानिक ज्ञान उनके धर्म के खिलाफ है। उन्होने अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने पर भी जोर दिया। क्योंकि यह आधुनिक ज्ञान के खजाने की कुंजी है।

सोसाईटी द्वारा मुजफ्फरपुर में एक पुस्तकालय की भी स्थापना किया गया था। इमदाद अली सर सैयद अहमद के बीच होने वाले पत्राचार से पता चलता है कि सैयद जब 1869-70 ई. में लंदन प्रवास में थे तब इमदाद अली द्वारा मुजफ्फरपुर में स्थापित पुस्तकालय हेतु 1000 रू0 भेजा गया था।[11] सैयद अहमद ने आक्सफोर्ड और कैम्ब्रीज विश्वविद्यालय के विद्वानों के सहायता से पाठ्यक्रम के अनुसार पुस्तकों की एक सूचि तैयार की और खरीदकर मुजफ्फरपुर भेज दिया। गार्सिन-डी-टैसी भी इस बात की पुष्टी करते हैं कि अलीगढ़ साइंटिफिक सोसाईटी के सहयोग से बिहार साइंटिफिक सोसाईटी ने पाँच किताबे प्रकाशित की और 12 किताबों का अनुवाद किया गया साथ ही सोसाईटी के पुस्तकालय में दो और किताबों की संख्या बढ़ी जिसका प्रकाशन मिस्र से हुआ था। साथ ही 130 और किताबें जो विभिन्न विषयों की थी, जिसका माध्यम अंग्रेजी था, ब्रिटिश विद्वानों के सलाह पर लाया गया था। सोसाईटी समय-समय पर बैठके आयोजित करती थी जिसमें वैज्ञानिक विषयों पर व्याख्यान दिए जाते थे और रसायन, भौतिकी में प्रयोग दर्शकों के सामने प्रदर्शित किए जाते थे। इन सभी जानकारियों को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने के लिए सोसाईटी के द्वारा सितम्बर 1868 ई. में एक उर्दू पाक्षिक पत्रिका अखबार-उल-आखिर की शुरूआत की गई। जिससे की भारत के लोगों की नैतिक, बौद्धिक और सामाजिक स्थिति में सुधार के उद्देश्य से शैक्षणिक विषयों पर लेख प्रकाशित किए जाते थे। साथ ही स्थानीय हित के मनोरंजक और शिक्षा प्रद विषयों तथा राजनीतिक चर्चाओं को भी प्रकाशित किया जाता था।[12] यह पत्रिका सोसाईटी के अपनी मुद्राणालय से प्रकाशित की जाती थी। जिसका नाम चश्म-ए-नूर या लामा-ए-नूर था। इसके सम्पादक अयोध्या प्रसाद थे जो कि तिरहुत का इतिहास के लेखक थे जिसे उर्दू में गुलजार -ए-बहार या रियाज-ए-तिरहुत कहा गया है। बाद में

---

8 बंगाल डिस्ट्रिक्ट गैजेट्स मुजफ्फरपुर: एल.एस.एस. ओ मौली, कलकत्ताः द बंगाल सेक्रेटेरिएट प्रेस, 1907, पृ.सं.,134।

9 गार्सियन-डी-टैसी,ला लिटरेचर हिंदुस्तानिज, पेरिसः अडोल्फे लाबित्ते 1870, पृ.सं.,10।

10 मोहम्मद सज्जाद, कंटेस्टींग कोलोनियलिज्म एंड सेप्रेटिज्म: मुस्लिम ऑफ मुजफ्फरपुर सिंस 1857, दिल्लीः प्राइमस, 2014, पृ. सं., 55।

11 वही,पृ.सं.,55।

12 वी.ए. नारायण, द रोल ऑफ बिहार साइंटिफिक एसोसिएशन इन द स्प्रेड वेस्टर्न एजुकेशन इन बिहार, आई.एच.सी. खंड 31(1969) पृ.सं., 421-24।

इस पत्रिका का सम्पादन मुंशी कुर्बान अली को बनाया गया । 1873 ई. से उर्दू में प्रकाशित पत्रिका का अनुवाद हिन्दी में भी किया जाने लगा था। पत्रिका के एक अंक में सर सैयद अहमद द्वारा इमदाद अली को भेजा गया एक पत्र प्रकाशित हुआ जबकि वह लंदन में थे (1869-70 ई.) पत्रिका यह बताता है कि सोसाईटी के संस्थापक अध्यक्ष 'नबाव' सैयद मोहम्मद ताकि थे जो बाद में मजिस्ट्रेट बने, सचिव इमदाद अली थे और आजीवन सचिव सैयद अहमद थे। जिसका जिक्र 10 नवम्बर 1868 ई. के अवध अखबार में है।

5. निष्कर्ष

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है की 19वीं सदी के अंत में बिहार साइंटिफिक सोसाईटी राष्ट्रीय विज्ञान के विकास के लिए विद्यालयों, मदरसा, मुद्राणालय और एक पाक्षिक उर्दू पत्रिका अखबार-उल-आखिर एवं एक अनुवाद विभाग का भी संचालन किया गया। साथ ही एक पुस्तकालय भी प्रारंभ किया गया। मुजफ्फरपुर के आसपास के क्षेत्रों में यूरोपिय विज्ञान सीखने के लिए इमदाद अली के प्रेरणा से छपड़ा, सीतामढ़ी, मुजफ्फरपुर, भागलपुर और गया में विद्यालय का स्थापना किया गया। साथ ही सोसाईटी द्वारा मुजफ्फरपुर में संचालित मदरसा जिसमें साहित्य, अरबी, फारसी, संस्कृत आदि विषयों को क्षेत्रीय भाषा में पढ़ाया जाता था। सोसाईटी द्वारा एक पाक्षिक पत्रिका अखबार-उल-आखिर प्रारंभ किया गया था जिसमे भारत के लोगो की नैतिक, बौद्धिक और सामाजिक स्थिति में सुधार के उद्देश्य से शैक्षणिक विषयों पर लेख प्रकाशित किय जाते थे। यह पत्रिका सोसाईटी की अपनी मुद्राणालय से प्रकाशित की जाती थी। सोसाईटी द्वारा एक अनुवाद विभाग का भी संचालन किया गया। जिसमें यूरोपीय वैज्ञानिक कार्यो का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जाता था। जिनमें ट्रिगोमेट्री , केमेस्ट्री , बॉटनी , हिस्ट्री ऑफ फिलोसॉफी आदि विषयों पर प्रतिष्ठित लेखकों के कुछ कार्यों का अनुवाद उर्दू में किया गया। साथ ही सोसाईटी द्वारा अनुवादित पुस्तकों एवं देश के विभिन्न भागों से लाए गए पुस्तकों के रख रखाव के लिए एक पुस्तकालय की भी स्थापना किया की गयी। अतः यह स्पष्ट हो जाता है इमदाद अली द्वारा स्थापित बिहार साइंटिफिक सोसाईटी राष्ट्रीय विज्ञान के विकास में महती भूमिका अदा की।

सन्दर्भग्रन्थ सूची

अर्नोल्ड, डेविड, औपनिवेशिक भारत में विज्ञान, प्रोधोगिकी और आयुर्विज्ञान, नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन, 2005

एल. एल. एस., ओ' मौली बंगाल डिस्ट्रिक गैजटियसर्: मुजफ्फरपुर, कलकत्ताः द बंगाल सेक्रेटेरियट प्रेस,1907

कुमार, दीपक, विज्ञान और भारत में अंग्रेजी राज, 1857-1905, दिल्लीः ग्रन्थ शिल्पी, 2014

चैधरी, पी. सी. रॉय, बिहार डिस्ट्रिक गैजटियसर्: मुजफ्फरपुर, पटनाः द सुपरिटेंडेंट सेक्रेटिरियट प्रेस,1958

टैसी,गार्सियन डी ला लिटरेचर हिंदुस्तानिज, पेरिसःअडोल्फे लाबित्ते 1870

नारायण , वी. एन., 'द रोल आफ बिहार साइन्टिफिक एसोसिएशन इन द स्प्रेड आफ वेस्टर्न एजुकेशन इन बिहार', इंडियन जॉर्नल आफ हिस्ट्री आफ साइंस, खंड 31, 1969

'फितरत', बिहारी लाल, (संपा., हेतुकर झा 2001), आईना - ए - तिरहुत, लखनऊ: 1883

बसाल, जार्ज, 'द स्प्रेड आफ वेस्टर्न साइंस', साइंस, खंड 156 (3775), 1967

रिपोर्ट ऑन द एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ बंगाल 1871-72, कलकत्ताः द बंगाल सेक्रेटेरियट प्रेस,1872

सज्जाद, मोहम्मद, कांटेसटिंग कलोनियालिस्म एंड सेपरेतिस्मः मुस्लिम आँफ मुजफ्फपुर सिंस 1857, नई दिल्लीः प्राइमस, 2014

सिन्हा, जे. एन., 'अर्ली ओरिजिंस आफ इंडियाज नेशनल साइन्स पॉलिसी', इंडियन जर्नल आफ हिस्ट्री आफ साइंस, खंड 48 ,1987

हंटर, डब्लू,डब्लू,ए स्टेटिकल अकाउंट ऑफ बंगाल, खंड-13 लंदन: 1877